प्रसंगवश:

आलोक मेहता

गरिमा-विशेषाधिकार के नाजुक तार

संसद की कार्यवाही रोकने वाले सांसदों को अब बाहर नहीं फेंकते मार्शल

'हमारी संसद और प्रेस में इस तरह की घटनाएं बढ़ रही हैं, जहां सरकारी पदों पर बैठे लोगों पर बिना तथ्यों की जांच किए तीखे हमले किए जा रहे हैं। इसका उनके काम के प्रति उत्साह पर बेहद कुप्रभाव पड़ रहा है। इस प्रकार की निंदनीय परिस्थितियों में कोई भी इज्जतदार व्यक्ति सरकारी सेवा या सार्वजनिक जीवन में नहीं आना चाहेगा।'

इस टिप्पणी पर अगस्त 2006 में क्या कोई आश्चर्य व्यक्त करेगा? राजीव गांधी से लेकर विश्वनाथ प्रताप सिंह, चंद्रशेखर, एच.डी. देवेगौड़ा, इंदर कुमार गुजराल, नरसिंह राव, अटल बिहारी वाजपेयी तथा अब मनमोहन सिंह के सत्ताकाल में उन पर अथवा उनके सहयोगियों, सलाहकारों, परिजनों तथा निकटस्थ मंत्रियों पर आरोप लगने के बाद हर राजनीतिक पार्टी विशेष का नेता इस तरह की टिप्पणी कर सकता है। चाहे जसवंत सिंह द्वारा नरसिंह राव राज में रहे अधिकारियों में से किसी को निशाना बनाकर मढ़ा गया 'जासूस' का आरोप हो अथवा नटवर सिंह के वोल्कर तथा पाठक कमेटी रिपोर्ट के बाद संसद में सोनिया गांधी के विरुद्ध हुई नारेबाजी के मामले का अथवा जॉर्ज फर्नांडिस पर तहलका कांड के साथ 'कफन-चोर' के आरोप वाले नारे का- कोई न कोई बेहद उत्तेजित हो जाता है।

लेकिन भारतीय जनता पार्टी के 'विद्वान' जुझारू नेता जरा संसदीय इतिहास के पन्ने उलटने का कष्ट करें तो पाएंगे कि उनके परम श्रेष्ठ सर्वोपरि नेता अटल बिहारी वाजपेयी 10 फरवरी, 1959 को लोकसभा में ऐसी ही एक टिप्पणी पर विशेषाधिकार हनन का प्रस्ताव लेकर आए थे। वह भी पहले पैराग्राफ में उल्लेख की गई टिप्पणी पर। वह टिप्पणी तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू के पूर्व विशेष सहायक एम.ओ. मथाई ने की थी। आदरणीय अटलजी ने इसे सांसदों का घोर अपमान बताया था और भारतीय लोकतंत्र के सबसे बड़े प्रवर्तक महान नेता पं. जवाहरलाल नेहरू ने अत्यंत लोकतांत्रिक ढंग से 'विशेषाधिकार हनन' के इस प्रस्ताव पर चर्चा होने दी थी। सबसे बड़ी बात यह थी कि उन्होंने प्रतिपक्ष के सांसदों की भावनाओं का ध्यान रखकर मथाई की टिप्पणी को 'दुर्भाग्यपूर्ण तथा खेदजनक' कहा लेकिन विशेषाधिकार हनन का मामला नहीं माना। फिर भी प्रतिपक्ष के कड़े तेवर को देखते हुए पूरा मामला लोकसभा की विशेषाधिकार समिति को भेजना मंजूर कर लिया। पं. नेहरू ने साथ ही यह सलाह अवश्य दी कि 'भविष्य में सदन की गरिमा रखने के मामलों में सदन के बाहर रहने वाले किसी व्यक्ति द्वारा कहे गए कुछ शब्दों को बहुत ज्यादा महत्व नहीं देना चाहिए।'

> भाजपा नेतृत्व वाले प्रतिपक्ष के अशोभनीय व्यवहार से दुखी सोमनाथ चटर्जी और शेखावत ने त्यागपत्र की पेशकश तक कर दी।

मथाई ने यह टिप्पणी किसी टी.वी. चैनल (तब वे थे भी नहीं) या किसी अखबार या मंच पर नहीं की थी। अपने ही बॉस प्रधानमंत्री को चिट्ठी में यह चिंता जताई थी और यदि कोई गड़बड़ थी तो यह कि पत्र अखबारों में छप गया था। सवाल यह है कि अब तो संसद के अंदर या बाहर खुला खेल फर्रुखाबादी चल रहा है। खासकर राजनीतिज्ञ सुविधानुसार कोई भी टिप्पणी करते हैं, फिर बयान उलट-पुलट करते हैं और मौका पड़ने पर 'अबाउट टर्न' करते हुए बदल जाते हैं। नटवर सिंह विवाद में जो दिग्गज नेता वोल्कर कमेटी की रिपोर्ट के नाम पर उन्हें मंत्रिमंडल से निकालने के लिए मनमोहन सरकार एवं संसद को हंगामे से हिलाते रहे, वही पाठक कमेटी की रिपोर्ट के निष्कर्ष की कुछ पंक्तियां सार्वजनिक होने पर नटवर का पक्ष लेते हुए प्रधानमंत्री और उनके कार्यालय को परेशान करने के लिए घमासान मचाए हुए हैं। बात यहीं थमी नहीं। सांसदों को सदन में गरिमामय व्यवहार करने, चीखने-चिल्लाने-नारेबाजी करने अध्यक्ष के आसन के सामने हंगामा न करने के विनम्र अनुरोध, अनुशासन की सलाह तथा बात बढ़ने पर चेतावनी के रूप में अराजकता बर्दाश्त न करने की बात कहने वाले लोकसभा अध्यक्ष सोमनाथ चटर्जी के विरुद्ध वे मोर्चा खोले हुए हैं। संभव है, इस मुद्दे पर शालीनता के समर्थन में कुछ लिखे जाने पर आज के बहादुर नेता हम जैसे पत्रकारों को भी मुसीबत में डाल दें लेकिन लोकतंत्र में लोकसभा अध्यक्ष, राज्यसभा के सभापति, राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश के विरुद्ध चलाए जाने वाले कुटिल अभियानों का प्रतिकार करना क्या पत्रकारों का धर्म नहीं है? भाजपा नेतृत्व वाले प्रतिपक्ष के अशोभनीय एवं आसन के सामने नारेबाजी के असंसदीय व्यवहार से सोमनाथ चटर्जी ही नहीं, राज्य सभा के सभापति भैरों सिंह शेखावत भी बेहद आहत हैं। दोनों ने खिन्न होकर अपने पदों से त्यागपत्र देने की पेशकश तक कर दी। लेकिन अफसोस करना दूर रहा भाजपाई नेता निजी टेलीविजन चैनलों पर निरंतर अध्यक्ष के व्यवहार को लेकर मनचाही अनर्गल टिप्पणियां कर रहे हैं। भारी शोरगुल के बीच अध्यक्ष पद पर आसीन व्यक्ति थोड़ी ऊंची आवाज में ही तो यह कह सकेगा, 'प्लीज बैठ जाइए। इससे अधिक बर्दाश्त नहीं होगा। ... यह हमारे लिए शर्मनाक दिन है....' इत्यादि। भाजपा राज वाली 12वीं लोकसभा में केवल 12 और 13वीं लोकसभा में 60 ध्यानाकर्षण प्रस्ताव तथा नियम 193 के तहत 15 और 56 बार विशेष चर्चा की अनुमति मिली। जबकि 14वीं लोकसभा के करीब दो वर्षों के दौरान अब तक 8 सत्रों में लोकसभा अध्यक्ष सोमनाथ चटर्जी ने 79 ध्यानाकर्षण प्रस्ताव रखने तथा नियम 193 के तहत 31 अवसरों तथा मुद्दों पर विशेष चर्चा की अनुमति दी। भाजपाई नेता अटलजी के कंधे पर राजनीतिक तोप (उनके हस्ताक्षरित एक पत्र) रखकर अध्यक्ष को निशाना बना रहे हैं जबकि एनडीए के कुछ घटकों ने अपने को अलग कर अध्यक्ष के प्रति सम्मान व्यक्त करते हुए वक्तव्य जारी कर दिया है। राजनीतिक गलियारों में आशंका यही व्यक्त की जा रही है कि अगले वर्ष होने वाले राष्ट्रपति-उपराष्ट्रपति के चुनावों को ध्यान में रखकर निशानेबाजी हो रही है। सांसदों के 'गरिमामय व्यवहार' के मुद्दे पर एक बार फिर पं. नेहरू की एक संसदीय टिप्पणी का उल्लेख शायद भाजपाई बंधुओं के गले उतरे। पं. नेहरू ने 28 अगस्त, 1958 को लोकसभा में कहा था, 'कल जो बहुत से भाषण हुए उनमें एक भाषण अटल बिहारी वाजपेयी का भी हुआ। अपने भाषण में उन्होंने कहा कि चुप रहने के लिए वाणी और विवेक दोनों होने चाहिए। इस बात से मैं पूरी तरह सहमत हूं।'

भाजपा के साथ जुड़े एनडीए के कुछ नेता बार-बार यह भी कह रहे हैं कि 'हाय राम ऐसी टीका-टिप्पणियां तो संसद में कभी नहीं हुईं।' सोशलिस्ट पृष्ठभूमि वाले जांबाज नेता संसदीय रिकॉर्ड में अपने परम पूजनीय राममनोहर लोहिया की टिप्पणियां जरा पढ़ लें। दिन था- 22 अगस्त, 1963 का। सत्तारूढ़ गैलरी से पं. नेहरू प्रश्नों के जवाब दे रहे थे। मुद्दा किसी घोटाले का नहीं, विकास-गरीबी इत्यादि का था। गर्मागर्म बहस के दौरान आदरणीय लोहियाजी ने कहा, 'प्रधानमंत्री ने मेरे दिमाग को ओछा कहा है। मैं उनके दिमाग को ओछा, गंदा और डरपोक कहता हूं।'

नेहरू ही नहीं, इंदिरा गांधी ने भी लोहिया की तीखी राजनीतिक या निजी टिप्पणियों को झेला। उसी परंपरा को राजनारायण और जॉर्ज फर्नांडिस ने आगे बढ़ाया। संसद ने ऐसे दृश्य हमने देखे हैं, जब लोकसभा में अध्यक्ष या राज्यसभा में सभापति ने सदस्यों को मार्शलों के कंधे पर उठवाकर बाहर फिंकवा दिया। पिछले 10 वर्षों में तो ऐसी नौबत ही नहीं आई है। आखिरकार, सांसदों को अपने अधिकारों, वेतन-भत्तों, सुविधाओं और गरिमा की चिंता रहती है तो उन्हें अध्यक्ष पद पर आसीन वरिष्ठतम नेताओं की गरिमा, भावना तथा प्रजातंत्र में आस्था रखने वाले भोले-भाले मतदाताओं की भावनाओं का ध्यान क्यों नहीं रखना चाहिए? ●